ISSN 2321 5054

परमारों की उत्पत्ति : एक पुनरावलोकन

डॉ. नवीन गिडियन
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष - इतिहास विभाग
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म. प्र.)

दसवीं शती में यह लोक-प्रसिद्ध था कि परमार वंश के मूलपुरूष की उत्पत्ति अर्बुदाचल के एक अग्निकुण्ड से हुई। सप्रसिद्ध कवि पद्मगुप्त वाक्-पति मुंज (972-995 ई.) और उसके उत्तराधिकारी सिंधुराज दोनों ही राजाओं का समकालीन था। उसके 'नवसाहसांक-चरित' में लिखा है[1] कि अर्बुदाचल वशिष्ठ का तपोवन था जो अथर्वन गीत के आदि समीक्षक तथा इक्ष्वाकु के कुल-पुरोहित थे। उनके पास एक 'कामधेनु' थी जिसको किसी समय गाधिसूनु (विश्वामित्र) हरण कर ले गये। इससे वशिष्ठ को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने कुछ मंत्रों को पढ़कर अग्नि में एक आहुति दी। उस अग्नि में से तत्काल एक वीर पुरूष निकला जो धनुष और किरीट तथा कांचन-कवच धारण किये हुए था। उसने विश्वामित्र से कामधेनु को बलात् छीनकर वशिष्ठ को लाकर दिया। इससे वशिष्ठ अत्यन्त प्रसन्न हुए और परमार (शत्रु-संहारक) की संज्ञा देकर उसको भूतल का आदि राजा बनाया। इस वीर पुरूष से एक वंश प्रचलित हुआ जिसके प्रति अच्छी वृत्ति के नृप अत्यन्त श्रद्धा रखते थे। कालक्रम से इस वंश में उपेन्द्र नामक एक राजा ने जन्म लिया।

राजपूताना की चारण कथाओं[2] में वर्णन है कि मुनिगण ध्यानमग्न और भक्ति में संलग्न होकर कालयापन कर रहे थे। दैत्यों का क्रोध उमड़ा जो सदा दुष्टता करने पर तुले रहते थे। ब्राह्मणों ने होम-भस्म के लिए गड्ढे खोदे, किन्तु दैत्य उनमें पुरीष, रक्त, अस्थियाँ और माँस फेंक कर उनके कार्य में बाधा डालने लगे। अतएव तपस्वियों ने यज्ञ-कुण्डों के चारों ओर बैठकर महादेव जी से सहायता की प्रार्थना की। महादेव जी को उन पर दया आई। अग्नि में से एक प्राणी का प्रादुर्भाव हुआ, किन्तु उसमें सामरिक गुणों का अभाव था अतः ब्राह्मणों ने उसको प्रवेश-द्वार पर प्रतिहार के रूप में बैठा दिया और उसका नाम पृथ्वीधर रखा जिसका अन्ततः संक्षिप्त रूप परिहार और प्रतिहार हुआ। ब्रह्मा की हथेली से एक दूसरा प्राणी उत्पन्न हुआ जिसका नाम चौलुक्य रखा गया। एक तीसरे का प्रादुर्भाव हुआ जिसका नाम परमार (शत्रु-संहारक) रखा गया और जिसने अन्य दोनों की सहायता से दैत्यों से युद्ध किया, किन्तु उनको पराजित न कर सका। तब और सहायता के लिए वशिष्ठ द्वारा की गई प्रार्थना पर एक अन्य सशक्त प्राणी का अग्नि से प्रादुर्भाव हुआ जिसके हाथों में घातक शस्त्र थे। यह 'चतुरंग' (चतुर्भुज) था। अतः उसका नाम चौहान रखा गया। उसकी सामरिक दक्षता और व्यक्तिगत वीरता से राक्षस पराजित और हत हुए।

एक दूसरे चारण ने लिखा है[3] कि एक बार इन्द्र ने दूर्बा घास की एक मूर्ति बनाकर और उस पर अमृत छिड़क कर उसे अग्निकुण्ड में फेंका और संजीवन-मंत्र जपा जिससे अग्नि-शिखाओं में से एक गदाधारी मूर्ति 'मर-मर' (मारो-मारो) कहती हुई उद्भूत हुई। उसका नाम परमार (शत्रु-संहारक) रखा गया और उत्तराधिकार रूप में उसे आबू, धार, उज्जैन प्रदेश दिये गये।

ISSN 2321 5054

खीची-चौहान के चारण मूकजी[4] के अनुसार 'सोलंकी की उत्पत्ति ब्रह्मतत्व से हुई और उसको चलुकराव की उपाधि दी गई। प्वार (परमार) का आविर्भाव शिव तत्व से हुआ और परियार का देवी तत्त्व से। मनोनीत वंश चौहान अग्निशिखा से उद्भूत हुआ और वह आबू छोड़ अभार्ह के लिए प्रस्थान कर भ्रमण करता रहा।

एक चारण विशेष ने अग्नि से परमारों की उत्पत्ति होना अस्वीकार किया है, किन्तु दूसरों का कथन है कि न केवल चौहान बल्कि परिहार, परमार और चौलुक्य भी अग्नि कुल के थे। परमार वंशीय शिलालेखों को छोड़कर किसी भी उपर्युक्त वंश के शिलालेखों में अग्नि से उत्पत्ति नहीं दी हुई है। चाहमानों का प्राचीनतम ज्ञात-अभिलेख इसके धोलपुर शाखा का है जो पूर्वी राजपूताना में है। इसकी तिथि 842 ई. है।[5] मुख्य चाहमान वंश की प्राचीनतम ज्ञात शिला-अभिलेख विग्रहराज का हर्प पापाण लेख है[6] जिसकी तिथि 973 ई. है। धोलपुर शिलालेख का इतना ही कथन है कि यह वंश 'उत्तम पृथ्वीपति चाहवान के महान् कुल' का है। हर्प पापाण लेख ने भी इस वंश का वर्णन करते हुए चारणों द्वारा कही गई काल्पनिक कहानियों का कोई उल्लेख नहीं किया है। चौलुक्य कुमारपाल की तिथ्यांकित 1151 ई. वड़नगर प्रशस्ति[7] का कथन है कि इस वंश का संस्थापक चौलुक्य गंगाजल से उत्पन्न किया गया था जो ब्रह्मा के पुनीत चुलुक में था। इसी प्रकार परिहार या प्रतिहार अपना वंशानुक्रम महाकाव्य के वीर लक्ष्मण से मानते हैं।[8]

'आईने-अकवरी'[9] के लेखक ने परमारों की अग्नि-उत्पत्ति स्वीकार की है, यद्यपि उसने इस सिलसिले में एक विल्कुल ही भिन्न कहानी कही है। कहा जाता है कि दैवी संवत् के चालीसवें वर्ष के लगभग 2350 वर्ष पूर्व (ईसवी पूर्व 761) महावाह नामक ऋपि ने एक अग्नि-मंदिर में प्रथम शिखा प्रज्वलित की और धार्मिक कर्म करने में व्यस्त हुए। मुमुक्षु उस अग्नि-मंदिर में आहुतियाँ देते थे और पूजा के उस रूप के प्रति अति आकर्षित थे। इससे वौद्धों को आशंका हुई और वे सांसारिक प्रभु के पास जाकर उसके द्वारा इस पूजा की समाप्ति कराने में सफल हुए। इससे लोग वहुत व्यथित हुए और उन्होंने ईश्वर से एक वीर उत्पन्न करने के लिए प्रार्थना की जो उनकी सहायता करने और उनकी व्यथा को दूर करने में सक्षम हो। सर्वोच्च न्यायमूर्ति ने इस अग्नि-मंदिर से सर्वसैनिक गुणोपेत एक मानव आकृति उत्पन्न की। इस वीर योद्धा ने अपने वाहुवल से अग्नि पूजा रूपी शान्तिपूर्ण कृत्य की समस्त अड़चनों को थोड़े ही समय में दूर किया। उसने धंजी नाम ग्रहण कर और अपने स्थान दक्खिन से आकर मालवा का सिंहासन ग्रहण किया। इस वंश की पाँचवीं संतति पुत्राज था, किन्तु वह निःसंतान था। उसकी मृत्यु होने पर सामंतों ने आदित्य पोंवार को उसका उत्तराधिकारी चुना। उसके बाद का राजवंश 'परमार' कहलाया।

अव हम इस पर विचार करेंगे कि परमारों के शिलालेखों में इस विषय में क्या कहा गया है। उदयादित्य (लगभग 1072 ई.) के शासन की उदयपुर प्रशस्ति[10] धारा के प्रमुख वंश का प्राचीनतम ज्ञात शिलालेख है जिसमें इस वंश के संस्थापक की काल्पनिक उत्पत्ति लिखी हुई है। उसका कथन है कि ज्ञानियों को ईप्सित पुरस्कार देने वाला अर्वुद नामक पर्वत, जो हिमालय का एक पुत्र है, पश्चिम में है जहाँ सिद्धों को पूर्ण समाधि होती है। वहाँ विश्वामित्र ने वलात् वशिष्ठ से उनकी धेनु छीनी। वशिष्ठ के वल से अग्निकुण्ड से एक वीर का उद्भव हुआ जिसने शत्रु-सेना का संहार किया। शत्रुओं का वध करने के बाद जव वह धेनु ले आया तव ऋपि वोले कि तुम परमार नाम से (राजाओं के) अधिपति होंगे। निम्नलिखित अन्य शिलालेखों में यही कथा सामान्य रूप से वर्णन की गई है -

(1) नागपुर शिलालेख।[11]
(2) पूर्णपाल का वसंतगढ़ शिलालेख, तिथ्यांकित 1042 ई.।[12]
(3) आबू पर्वत शिलालेख संख्या पहली और दूसरी।[13]
(4) आबू पर्वत पर अचलेश्वर मंदिर का एक अप्रकाशित शिलालेख।[14]
(5) पाटनारायण शिलालेख।[15]
(6) परमार चामुंडराज का अर्थुना शिलालेख।[16]
(7) आबू पर्वत शिलालेख।[17]

इन शिला-अभिलेखों का वर्णन पूर्णरूपेण या अंशतः 'नवसाहसांकचरित' के वर्णन से मिलता है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि इनमें से एक भी हमारी समस्या का समाधान करने में अधिक सहायता नहीं करते। इनका तात्पर्य केवल यह है कि परमार एक वंश का नाम था न कि जाति का। एक वीर ने उसको उच्च स्थान दिलाया और उसके नाम पर इस वंश का नाम चला। शिलालेखों में स्पष्ट लिखा है कि यह वंश 'परमार वंश' कहलाता था क्योंकि इसका उद्भव 'परमार' नामक व्यक्ति से हुआ। प्राचीन भारत के अनेक राजवंशों के सदृश ही इसकी उत्पत्ति है। महाराजगुप्त मगध के चक्रवर्ती गुप्त राजवंश का संस्थापक था और प्रत्यक्षतः उसके नाम पर इस वंश का नाम पड़ा।[18] प्रतिहार गुर्जर जाति की एक शाखा थे। कुछ ही अवसरों पर उन्होंने अपने को गुर्जर कहा है।[19] ये सदा अपने को प्रतिहार कहना पसन्द करते थे। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इस वंश का संस्थापक 'प्रतिहार' उपाधि धारण करने वाले हिन्दू पौराणिक कथा के वीर लक्ष्मण थे।[20]

क्योंकि ऐसी बात थी अतः इसमें अधिक आश्चर्य करने की बात नहीं है कि 'परमार' नाम किसी जाति, वर्ण या इसके कोई उप-विभागों के अर्थ में प्राचीन भारतीय साहित्यों में प्रत्युक्त नहीं हुआ है।[21]

गुजरात के अहमदाबाद जनपद के परंतेल तालुक के हरसोल ग्राम में कुछ ही समय पूर्व परमार सीआक द्वितीय के शासन काल का एक शिलालेख मिला है जिसकी तिथि विक्रमी संवत् 1005 = 948 ई. है। इस वंश का यह प्राचीनतम ज्ञात अभिलेख है। इसमें लिखा है -

परम-भट्टारक-महराजाधिराज-परमेश्वर-श्रीमद्-अमोघवर्ष-देव-पादानु-ध्यात-परम-भट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-श्रीमद् अकालवर्ष-देव-पृथ्वी-बल्लभ-श्रीवल्लभ-नरेन्द्र-पादानाम्।

तस्मिन कुले कल्मष-मोष-दक्षें। जातः प्रतापाग्नि-हुतारि-पक्षः व (ब) प्पैय-राजेति नृपः प्रसिद्धम् तस्मात् सुतो भूद् अनु वैरिसिंह। दृप्तारि-वनिता-वक्त्र-चन्द्र-वि (बि) म्ब (ब)-कलंकटा नो धौता यस्यकीर्ति आपि-हर-हासाबदातया। दुर्व्वार-रिपु-भूपाल-रण-रंगैक-नायकः। नृपः श्री-सीआकस् तस्मात् कुल-कल्प-द्रुमो भवत्।[22]

स्पष्ट है कि 'परम-भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर कालवर्ष-देव पृथ्वीवल्लभ ने परम-भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर अमोघवर्ष-देव के चरणों का ध्यान किया। उस सम्राट के विख्यात कुल में नृप वप्पैयराज उत्पन्न हुआ जो अपराध को दूर करने में दक्ष था और जिसने अपनी प्रतापाग्नि से शत्रुओं को जलाया, उसका और पुत्र उत्तराधिकारी विख्यात वैरिसिंह था। उसका उत्तराधिकारी सीअक था जो रण में अजेय एक वीर योद्धा था।

अमोघवर्ष का पुत्र अकालवर्ष जिसके वंश में वप्पैयराज उत्पन्न हुआ था, प्रत्यक्षतः मान्यखेत का नृप राष्ट्रकूट अकालवर्ष कृष्ण तृतीय था। उसके शासन की ज्ञात तिथियाँ 940 ई. से 951 ई. तक में हैं।[23] वह परमार सीअक द्वितीय का समकालीन और सर्व संभाव्यतः उसका अधिराज था। वप्पैय वाक्पति का प्राकृत अपभ्रंश है।[24] 'गुडवहो काव्य' में इसके ग्रन्थकार वाक्पति का नाम वप्पैय दिया हुआ है। निस्संदेह हरसोल दानपत्र में उल्लिखित वप्पैय निश्चय ही वैरिसिंह द्वितीय का पिता वाक्पतिराज प्रथम है। अतः उपर्युक्त दानपत्र से प्रत्यक्ष है कि परमार राष्ट्रकूट जाति के अंग थे। परमारों की राष्ट्रकूट उत्पत्ति इस तथ्य से और भी प्रमाणित है कि सीआंक द्वितीय के पुत्र वाक्पति मुंज ने अमोघवर्ष श्रीवल्लभ राष्ट्रकूट उपाधियाँ धारण की थीं।[25] इस दिशा में प्रकाश डालने वाला इस वंश का कोई अन्य शिलालेख अब तक नहीं मिला है। प्रतिहारों के अभिलेख इसी भाव को प्रस्तुत करते हैं। उनमें एक को छोड़कर किसी में भी प्रतिहारों की गुर्जर उत्पत्ति का कोई उल्लेख नहीं है।[26] परमारों का मूल वासस्थान अवश्य ही दक्षिण में रहा होगा जो किसी समय चक्रवर्ती राष्ट्रकूटों का निवास-स्थान तथा राज्य था। 'आईने-अकबरी' में लिखा है कि[27] परमार वंश के संस्थापक धंजी दक्खिन से अपनी राजधानी बदल कर मालवा के अधीश्वर बने।[28]

सन्दर्भ

1. नवसाहसांक-चरित, पद्मगुप्त उपनाम परिमल कृत, पं. वामन शास्त्री इस्लामपुरकर द्वारा सम्पादित, बंबई संस्कृत सीरीज, सं. 53वीं, ग्यारहवाँ सर्ग, श्लोक 64-76, 1895
2. टॉड जेम्स : 'एनल्स ऑफ राजस्थान' (क्रु का द्वारा सम्पादित), खण्ड 1, पृ. 113 एवं कनिंघम : ए. एस. आई. रिर्पोट, खण्ड 2, पृ. 255
3. बॉम्बे गजेटियर, खण्ड 9, पृ. 495
4. कनिंघम : ए. एस. आई. रिर्पोट, खण्ड 2, पृ. 255
5. एन्शियन्ट इंडिया, खण्ड 5, परिशिष्ट संख्या 12
6. उपर्युक्त खण्ड 2, पृ. 116
7. एन्शियन्ट इंडिया, खण्ड 1, पृ. 296
8. उपर्युक्त, खण्ड 18, पृ. 110
9. अबुल फजल : आईने-अकबरी (ब्लॉकमन और जेर्रेट कृत अंग्रेजी अनुवाद), खण्ड 2, पृ. 214
10. ए. इं., खण्ड 1, पृ. 236
11. ए. इं., खण्ड 2, पृ. 180
12. उपर्युक्त खण्ड 9, पृ. 11
13. ए. इं., खण्ड 8, पृ. 200
14. उपर्युक्त, खण्ड 47।। पृ. 193 पादटिप्पणी 2
15. उपर्युक्त, खण्ड 45, पृ. 77
16. उपर्युक्त खण्ड 14, पृ. 295

ISSN 2321 5054

17. उपर्युक्त खण्ड 9, पृ. 148
18. श्री एलन कृत, 'गुप्ता क्वाइंस' भूमिका पृ. 14
19. उपर्युक्त खण्ड 3, पृ. 266
20. उपर्युक्त खण्ड 18, पृ. 110
21. प्रायः सभी भारतीय इतिहास-लेखकों की राय है कि 'परमार' भारत के मूल निवासी नहीं थे। उनका कहना है कि 'परमार' शक्तिशाली गुप्त साम्राज्य का पतन करने वाले विचरणशील हूण जनजातियों के साथ पाँचवीं या आठवीं शती ईसवी में भारत आये। एक गुजराती परम्परा के आधार पर भी वाट्सन (इंडियन एंटिक्वरी, खण्ड 4, पृ. 147) ने लिखा है कि चावण वनराज परमार कहलाता था और उन्होंने एक वंशावली की चर्चा की है जिसमें वर्णन किया गया है कि वनराज का वंश परमार जनजाति के विक्रमादित्य का वंशज है (उपर्युक्त पृ. 148)। चावण, चाप, चापोत्कट पर्यायवाची संज्ञाएँ हैं। चावण गुर्जर थे यह तथ्य ज्योतिर्विद ब्रह्मगुप्त से ज्ञात है। उसका कथन है कि उसने अपने ग्रंथ को गुर्जर व्याघ्रमुख के अधीन भीनमाल में 628 ई. में तैयार किया जो चाप वंश का था (बॉम्बे गजेटियर, खण्ड 1, भाग 1, पृ. 138, पाद टिप्पणी 1)।
22. एन्शियन्ट इंडिया, खण्ड 19, पृ. 237
23. बॉम्बे गजेटियर, खण्ड 1, भाग 2, पृ. 421
24. 'काव्य प्रकाश' संपादक महेशचन्द्र, न्यायरत्न, 1886, पृ. 119
25. अमोघवर्ष-देव पराभिधान-श्रीमद्-वाक्पतिदेव-पृथ्वीवल्लभ-श्रीवल्लभ-नरेन्द्र-देवः कुशलो।
26. इंडियन ऐन्टीक्वरी, खण्ड 6, पृ. 51, खण्ड 14, पृ. 160
27. उपर्युक्त, खण्ड 2, पृ. 214
28. यह प्रश्न विवेकपूर्वक उठाया जा सकता है कि परमारों ने अपने उत्तरकालीन अभिलेखों में अपनी राष्ट्रकूट उत्पत्ति का कोई उल्लेख क्यों नहीं किया। ईसवी सन् की नवीं, दसवीं और ग्यारहवीं शतियों के उत्कीर्ण अभिलेखों (एपिग्राफिआ इंडिका, खण्ड 10, पृ. 17, खण्ड 9, पृ. 248) में अनेकानेक क्षुद्र शासक वंशों ने अपने को राष्ट्रकूट जाति का अंग लिखा है। परमारों के ऐसा न करने का कारण ढूंढने के लिए हमें दूर नहीं जाना है। पद्मगुप्त कृत 'नवसाहसांक-चरित' जो 996-1000 ई. के बीच लिखा गया था, प्राचीनतम ज्ञात अभिलेख हैं जिसमें 'परमार वंश' का वर्णन किया गया है और इसके संस्थापक की पौराणिक उत्पत्ति लिखी हुई है। इस पुस्तक के लिखने के समय तक के छः राजकीय दानपत्र मिले हैं जिनको पूर्व के परमार राजाओं ने निःसृत किया था। उनमें से किसी में भी उन राजाओं के वंश का नाम 'परमार' नहीं लिखा गया है। इसके विपरीत कुछ में राष्ट्रकूट जाति से संबंध होने का दावा किया गया है।